RESEARCH COMMUNICATIONS
(An International Open Access, Peer Reviewed, Multidisciplinary Online Journal)
https://research-communications.cmpcollege.ac.in
ISSN: 2584-1270
Volume: 2, Issue: 2, July-December 2024, pp. 75-80

संस्कृत साहित्य में कुम्भपर्व का सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक विहङ्गावलोकन

भास्कर मिश्र
शोधच्छात्र (संस्कृत), सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज
इलाहाबाद विश्वविद्यालय प्रयागराज।
E-mail:- bhaskarmishra3499@gmail.com

शोध सार

सम्पूर्ण विश्व को प्रकृति के सापेक्ष सुव्यवस्थित करने वाला वाङ्मय संस्कृत साहित्य है। संस्कृत साहित्य ने अपनी सुसमृद्ध शब्दावलियों में अध्यात्मवाद के अन्तर्गत विश्व के सम्पूर्ण विज्ञान को समाहित कर सांस्कृतिक परिवेश निर्मित किया है। कुम्भ पर्व की सांस्कृतिक छवि भी यही से उत्पन्न है, जो समाज को वैज्ञानिक विधि से सरलतम पद्धति में आध्यात्मिकता को प्रस्तुत करती है। वैदिक साहित्य से लेकर पौराणिक कथाओं, किंवदन्तिओं एवं लौकिक श्रुतिओं में कुम्भ का वर्णन प्राप्त होता है। कुम्भ की ऐतिहासिकता, पर्व की सांस्कृतिकता, आस्था की वैज्ञानिकता पठनीय एवं अनुकरणीय है।

मुख्य शब्द: *संस्कृत साहित्य में कुम्भपर्व का सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक विहङ्गावलोकन*

प्रस्तावना

भारतवर्ष सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड का ऐसा केन्द्रबिन्दु है, जो सम्पूर्ण विश्व को सर्वप्रकारेण सुव्यवस्थित सञ्चालन करने का धर्म रखता है, एवं यही धर्म सनातन धर्म कहलाता है। सनातन धर्म 'चिर पुरातन नित्य नूतन' है, एवं प्रकृति की वैज्ञानिक गतिविधियों को भारतीय संस्कृति के रूप में व्यवहृत करता है। सूर्य प्रतिदिन अपनी किरणों से प्रकाश देता है, हम उसे यह जानते हुए भी कि सूर्य आज का नहीं है, कहते हैं सूर्य उदित हो रहा है, यही सनातन धर्म है। सनातन की गूढ वैज्ञानिकता सामान्य लोगों के लिए सरलतम व्यवहार हेतु तत्त्वदर्शियों ने संस्कृति के रूप में सुस्थापित किया, तथा इनका वैशिष्ट्य वैदिक ज्ञानराशि के रूप में प्रतिपादित किया। इन्हीं ज्ञानराशि से कुम्भ पर्व का स्वरूप प्राप्त होता है-

"चतुरः कुम्भांश्चतुर्धा ददामि क्षीरेण पूर्णा उदकेन दध्ना।
एतास्त्वा धारा उपयन्तु सर्वाः स्वर्गे लोकेमधुमत् पिन्वमाना।।"[i]
"जघान् वृत्रं स्वधितिर्वनेव रूरोज अरदन्न सिन्धून।
विभेद गिरिं नवभिन्न कुम्भभागा इन्द्रो अकृणता स्वयुग्भिः।।"[ii]
"आविशन्कलशठे सुतोविश्वाऽअर्षन्न मिश्रियः।
इन्दुरिन्द्राय धीयते।।"[iii]
"कुम्भोवनिष्ठुर्जनिता शचीभिर्यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भाऽअन्तः।
प्लाशिर्व्यक्तः शतधार उत्सो दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः।।"[iv]

इस प्रकार चारों वेदों में कुम्भ का स्वरूप प्राप्त होता है। अथर्ववेद का चतुरः शब्द चतुर्धा कुम्भ के चार स्थानों हरिद्वार, प्रयागराज, उज्जैन एवं नासिक स्थानों को सूचित करता है।

कुम्भ पर्व की व्युत्पत्ति एवं स्वरूप

वैदिक साहित्य में कुम्भ के स्वरूप का संकेत प्राप्त करने के उपरान्त हम कुम्भ पर्व के निर्वचन को इस प्रकार समझते हैं-

१)- कुं पृथ्वीं भावयन्ति सङ्केतयन्ति भविष्यत्कल्याणादिकाय महत्याकाशे स्थिताः बृहस्पत्यादयो ग्रहाः संयुज्य हरिद्वार-प्रयागादितत्पुण्यस्थानविशेषानुदिश्य यस्मिन् सः कुम्भः।

२)- कं जलन उम्भति पूरयति अवर्षणादिदुर्भिक्षेभ्यो दूरयतीति कुम्भः।

३)- कुं पृथ्वीं उम्भति पूरयति मङ्गलसम्मानादिभिरिति कुम्भः।

४)- कुः पृथिवी उभ्यतेऽनुगृह्यते उत्तमोत्तममहात्मसङ्गमैः तदीयहितोपदेशैः यस्मिन् सः कुम्भः।

५)- कुं पृथ्वीं भावयति पोषयतिविविधयागादिभिरिति वा कुम्भः।[v]

अतः कुम्भ पर्व कल्याणादि का सूचक पृथिवी का पुण्यतम स्थान है, जो मानव के दैहिक दैविक भौतिक तापों की शान्ति करता है। कुम्भ के प्रतीक कलश के स्वरूप के विषय में एक प्रसिद्ध श्लोक मिलता है-

"कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः।
मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्यमे मातृगणा स्मृताः।
कुक्षौ तु सागराः सर्वेः सप्तद्वीपा वसुन्धरा।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्याथर्वणः।।
अङ्गैश्च सहिता सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा"।।[vi]

इस प्रकार कलश के स्वरूप को ब्रह्माण्ड का संकेत माना गया है। कलश में अमृत की धारा को लेकर देव दानव द्वारा समुद्र मंथन से उत्पन्न होने पर सर्वप्रथम कुम्भ का उल्लेख मिलता है-

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महौदधौ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयं।।[vii]

वस्तुतः यह प्रतीकात्मककथा है, जिसमें देवासुरवृत्ति का मानव की शरीर में आरोपण किया गया है। इस प्रकार कुम्भ के स्वरूप को प्रतीकात्मक समझते हुए विश्व की समस्त सकारात्मक एवं नकारात्मक ऊर्जा का समावेश कुम्भ की संरचना में द्योतित है।

कुम्भपर्व का सांस्कृतिक विवेचन

कुम्भ पर्व का प्रारम्भ समुद्र मंथन की कथा से प्राप्त होता है। जब समुद्र मन्थन प्रारम्भ हुआ तो उसमें से 14 रत्न प्राप्त हुए, जिनमें क्रमशः कालकूट विष, कामधेनु गाय, उच्चैश्रवा अश्व, ऐरावत हाथी, कौस्तुभ मणि, कल्पवृक्ष, रम्भा अप्सरा, महालक्ष्मी, वारुणी मदिरा, चन्द्रमा, शारंग धनुष, पाञ्चजन्य शंख, धन्वंतरी एवं अमृत थे। अमृत कलश में था, एवं अमृत प्राप्त होते ही देव-दानव विवाद प्रारम्भ हुआ-

एवं विवादमानेषु काश्यपेषु सुधाग्रहे।
भगवान् मोहयित्वा तान्मोहिन्या विभजत् सुधाम्।।
विवादे काश्यपेयानां यत्र यत्रावनिस्थले।
कलशोन्यपततत्र कुम्भपर्व तदोच्यते।।[viii]

इस प्रकार कुम्भ पर्व का दृष्टांत समुद्र मन्थन से प्राप्त होता है-

“पृथिव्यां कुम्भयोगस्य चतुर्धा भेद उच्यते।
चतुस्थले च पतनाद् सुधा कुम्भस्य भूतले।।
विष्णुद्वारे तीर्थराजेऽवन्त्यां गोदावरी तटे।
सुधा बिन्दु विनिक्षेपाद् कुम्भ पर्वेति विश्रुतम्।।
तस्यात्कुम्भात्समुत्क्षिप्त सुधाबिन्दुर्महीतले।
यत्रयत्रात्यतत्तत्र कुम्भपर्व प्रकल्पितम्।।”[ix]

अर्थात् हरिद्वार प्रयागराज नासिक एवं उज्जैन में सुधाधार छलककर गिरने के कारण इन स्थानों पर कुम्भपर्व का प्रारम्भ हुआ। ध्यातव्य है कि चन्द्रमा ने अमृत को गिरने से, सूर्य ने कलश को टूटने से, बृहस्पति ने दैत्यों से झपटने में एवं शनि ने जयन्त से छुड़ाने में रक्षित किया, एतदर्थ इन्हीं ग्रहों के विशेष संयोग पर कुम्भ पर्व का विधान है, जिसमें हरिद्वार में कुम्भ राशि का बृहस्पति एवं मेष में सूर्य संक्रांति, प्रयागराज में कुम्भ सूर्य के मकर राशि एवं बृहस्पति के वृष राशि, उज्जैन में कुम्भ सूर्य मेष राशि एवं बृहस्पति सिंह राशि पर तथा नासिक में कुम्भ सूर्य मेष राशि एवं बृहस्पति सिंह राशि होने पर होता है। कुम्भ का सांस्कृतिक विवेचन अत्यन्त स्पष्ट एवं प्रमाणित है। सांस्कृतिक परिवेश के इस कुम्भ पर्व में लोग कल्पवास की अवधारणा पर उक्त स्थानों पर मासपर्यन्त आध्यात्मिक वातावरण का प्रादुर्भाव कर मन को सुस्थिर बनाने का आयास करते हैं। कुम्भ पर्व के कल्पवास का महत्व प्रयागराज में सर्वाधिक है। ऋग्वेद भी स्पष्ट करता है-

“सितासिते सरिते यत्र सङ्गमे तत्राप्लुतासौ दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते।।”[x]

प्रयागराज में सितासित सरिता (गंगा-यमुना) के क्षेत्र में 12वें वर्ष में पूर्ण कुम्भ का आयोजन होता है, जिसके विषय में स्पष्ट रूप से अथर्ववेद में उल्लेखनीय है-

"पूर्ण: कुम्भोऽधिकाल अहितस्तं वै पश्यामो बहुधा नु सन्त:।

स इमा विश्वा भुवनानि कालं तमाहु: परमे व्योमन्।।"[xi]

इस प्रकार स्पष्ट है कि कुम्भ पर्व का सांस्कृतिक विवेचन वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक संस्कृत में द्रष्ट्व्य है, जो भारतीय जनमानस के मध्य आज भी प्रमुख से प्रचलित है।कुम्भ पर्व की संस्कृति में कल्पवास का विधान होता है, कल्पवास का तात्पर्य विविध धार्मिक क्रियाकलाप से है, जिनमें से प्रमुख हैं-

1)- एक मास की अवधि तक सामान्य मनुष्यों को प्रयागादि पवित्र तटों पर स्नान-ध्यान आदि का विधान।

2)- शास्त्रार्थ आदि की परम्परा का आयोजन।

3)- प्रसिद्ध आचार्यों द्वारा धार्मिक क्रियाकलापों की निर्णयात्मक गतिविधि।

4)- अन्त: एवं बाह्य परिमार्जन हेतु विभिन्न प्रकल्पों का समायोजन।

दुर्भाग्यवश अद्यतन स्थिति में कुम्भपर्वों के आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक परिवेश को पिकनिक केन्द्र बनाकर उसके स्वरूप को विकृत कर दिया गया है। अतः हमें इस सांस्कृतिक वैभव को अक्षुण्ण बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए।

कुम्भपर्व का वैज्ञानिक विवेचन

आस्था का यह पर्व कुम्भ कोरी कल्पना का विषय नहीं है। वैदिक साहित्य की कथाओं से प्रमाणित होने पर यह स्वयं ब्रह्माण्ड के विज्ञान का सूचक है। ज्योतिष विज्ञान की ग्रहगति इसकी वैज्ञानिकता की पुष्टि करती है। "कुम्भीका दूषीका: पीयकान्"[xii] जिस अमृतत्व की बात करता है, वह अमृत तत्व प्रकृति से प्राप्त ऐसा पेय है, जिसका प्रवाह सार्वकालिक रहेगा। कुम्भ पर्व का अमृतपान से अन्यान्य सम्बन्ध है। पूर्वोक्त प्रतिपादित है कि अमृत तत्व प्राकृतिक प्रतीकात्मक सञ्जीवनी है, जो प्रकृति के पञ्चभूत तत्त्वों में स्थित रहता है। पिण्डरूपी शरीर पञ्चतत्व से युक्त होने से अमृत इसमें भी स्थित रहता है। जल भी पञ्चभूत का अंग है अतः यह शरीर में अमृतरुप में स्थित रहता है-

"आपो मे रेतसि श्रिता:। रेत: हृदये। हृदयं मयि। अहममृते। अमृतं ब्रह्मणि।"[xiii]

कुम्भ आदि पर्वों की वैज्ञानिकता यह है कि शरीर में तिरोहित इस अमृत तत्व रूपी सञ्जीवन रस के शारीरिक एवं मानसिक सम्प्राप्ति हेतु पौराणिक प्रतीकात्मक कथाओं के द्वारा खगोलीय विधियों का अनुप्रयोग कर जिन स्थानों पर कुम्भ पर्व की उपादेयता बतायी गई, वह सकारात्मक ऊर्जा के पूर्ण केन्द्र है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार द्रव्य अविनाशी है, किन्तु विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि द्रव्य का जो बाह्य स्वरूप है, सर्वथा नश्वर है, उसमें शेष केवल उसका तत्व रहता है, जिसमें किसी माध्यम द्वारा ऊर्जा स्वत: उत्पन्न हुआ करती है। यह ऊर्जा

स्थानांतरित होकर सर्वदा स्वरूप परिवर्तित करती है, इसका क्षरण कभी नहीं होता। प्राकृतिक रूप से यह ऊर्जा पञ्चतत्व(पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश) के द्वारा सर्वथा शुद्ध रूप में प्राप्त होती है। कुम्भ आदि पर्वों पर जल के द्वारा हम सभी इस अमृत रूपी ऊर्जा की प्राप्ति करते हैं, यही इस पर्व की वैज्ञानिकता है। पण्डित देवदत्त शास्त्री जी ने इस अमृत तत्व रूपी ऊर्जा से प्रत्येक रोगों का शमन बताया है-

"मानव शरीर की निर्धारक शक्ति प्राण है। नाड़ी जाल के मुख्य केन्द्रों को आधार बनाकर इस अमृत तत्व से सम्पूर्ण रोगोपचार किए जा सकते हैं"[xiv]

इस प्रकार कुम्भ पर्व आर्षद्रष्टा ऋषियों का रहस्यात्मक चिन्तन है, जो सर्वथा सर्वप्रकारेण अनुकरणीय है।

उपसंहार

इस प्रकार वर्तमान समय का चारों स्थानों हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन, एवं नासिक में कुम्भ का अमृतोत्सव होता है।

इसके अतिरिक्त कुम्भ सम्बंधित अन्यान्य विवरण पुराण साहित्य एवं दन्त-कथाओं में भी प्राप्त होता है। शरीर में स्थित आत्मा के प्रकाश को पहचानने के लिए ऋषियों ने मानव शरीर के अन्दर अमृतरस के कुण्डों को समझाने हेतु तिथि, ग्रह, नक्षत्र आदि के आधार पर इन स्थानों का वैशिष्ट्य बताया। कुम्भ पर्व के उद्भव की कथा सांकेतिक विज्ञान है, जिसमें समुद्रमन्थन को आत्म-मंथन एवं अमृत कलश को अपने भीतर से ही प्राप्त करने का गूढ़ विज्ञान समाहित है। चेतना के दो रूप हैं- मन एवं आत्मा, मन चञ्चल एवं विक्षुब्ध है, जबकि आत्मा शान्त। अध्यात्म जब चिन्तन एवं विश्लेषण की चरम सीमा पर पहुंचा, तब उसे आत्मा एवं आत्मतत्व का साक्षात्कार हुआ। विश्लेषण की सहजता सांकेतिकता में दिया गया, जिसमें कुम्भ पर्व भी एक है। प्रयागराज में माघ मास में आयोजित कुम्भ सूर्य की किरणों से गंगातट के स्निग्ध वातावरण को स्फूर्ति व चित्त की एकाग्रता, नक्षत्रीय विज्ञानों से मन को शान्ति प्रदान कर आत्मान्वेषण की प्रवृत्ति को प्रादुर्भूत करती है। प्रकृति के आधार पर कुम्भ का आयोजन धर्म की व्यवस्था का एक अंग है। प्रयागराज में गङ्गा यमुना के संङ्गम पर माघ मास में पञ्चतत्वों से अपनी स्थूल शरीर का सन्तुलन करना, कल्पवास के रूप में कर्मजव्याधि का निरोध करना होता है। भारतीय संस्कृति में इसे जल चिकित्सा एवं सूर्यकिरण चिकित्सा के रूप में भी जाना जाता है। ज्योतिषविज्ञान के अनुसार भचक्र ३६० अंश अर्थात् १०८ भाग होते हैं। भचक्र १२ राशियों में विभक्त होते हैं, अतः ३० अंश अथवा ९ भाग की एक राशि होती है। चारों कुम्भ स्थान जिस राशि एवं लग्न से प्रारम्भ होते हैं, वह शौनकीयशाखोक्त विद्या के अनुसार नैऋर्तिदोष, क्षेत्रज व्याधि दोष, देवयजनदोष आदि का निवारण कर पाप-शाप-ताप मुक्त करता है। इन्हीं वैज्ञानिकताओं को स्कन्दपुराण आदि ने कुम्भ पर्व को कथा के रूप में प्रतिपादित किया, जिससे हम सभी सामान्य लोगों को इसका विज्ञान सामान्य रूप से समझ आ जाए।

यह अध्यात्म पूर्ण विज्ञान है। ध्यातव्य है कि कुम्भ पर्व है, उत्सव एवं त्यौहार नहीं, अतः सत्व बुद्धि एवं पूर्ण लाभ हेतु इसकी गहनता का मनन करना हम सभी का नैतिक कर्तव्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1) अथर्ववेद ४.३४.७
2) ऋग्वेद १०.८९.७
3) सामवेद पू० ६.३
4) शुक्लयजुर्वेद १९.८७
5) कुम्भपर्व-माहात्म्य, वेदाचार्य पंडित वेणीरामशर्मा गौड, कृष्णगोपाल केडिया, वणिक्प्रेस बनारस, प्रथम संस्करण-सन् 2004ई.
6) नित्यकर्म पूजा प्रकाश, व्याख्याकार-लाल बिहारी मिश्र, गीता प्रेस गोरखपुर प्रकाशन।
7) कुम्भपर्व-माहात्म्य, वेदाचार्य पंडित वेणीरामशर्मा गौड, कृष्णगोपाल केडिया, वणिक्प्रेस बनारस, प्रथम संस्करण-सन् 2004ई.
8) स्कन्दपुराण, माहेश्वर खण्ड केदारखण्ड, गीता प्रेस गोरखपुर प्रकाशन।
9) प्रयागराज कुम्भ कथा- डॉ० राजेन्द्र त्रिपाठी रसराज, सत्साहित्य प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019 ई०, -2019 ई०, ISBN:978-81-7721-382-9
10) ऋग्वेद खिलसूक्त (10.75.1)
11) अथर्ववेद 19.53.3
12) अथर्ववेद 16.6.8
13) क्रिया योग साधना- पण्डित देवदत्त शास्त्री, शुभम प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण-सन् 2013 ई0, ISBN:978-9382415-01-05
14) अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान-पण्डित देवदत्त शास्त्री, शुभम प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण-सन् 2013 ई०, ISBN:81-901887-7-1

---

[i] अथर्ववेद ४.३४.७

[ii] ऋग्वेद १०.८९.७

[iii] सामवेद पू० ६.३

[iv] शुक्लयजुर्वेद १९.८७

[v] कुम्भपर्व-माहात्म्य, वेदाचार्य पंडित वेणीरामशर्मा गौड, पृष्ठ संख्या-१ व २

[vi] नित्यकर्म पूजा प्रकाश, लाल बिहारी मिश्र, पृष्ठ संख्या-१८९

[vii] कुम्भपर्व-माहात्म्य, वेदाचार्य पंडित वेणीरामशर्मा गौड, पृष्ठ संख्या-४

[viii] स्कन्दपुराण, माहेश्वर खण्ड केदारखण्ड, पृष्ठ संख्या-25

[ix] प्रयागराज कुम्भ कथा- डॉ० राजेन्द्र त्रिपाठी रसराज

[x] ऋग्वेद खिल(10.75.1)

[xi] अथर्ववेद 19.53.3

[xii] अथर्ववेद 16.6.8

[xiii] क्रिया योग साधना- पण्डित देवदत्त शास्त्री, पृष्ठ संख्या-87

[xiv] अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान-पण्डित देवदत्त शास्त्री पृष्ठ संख्या-19